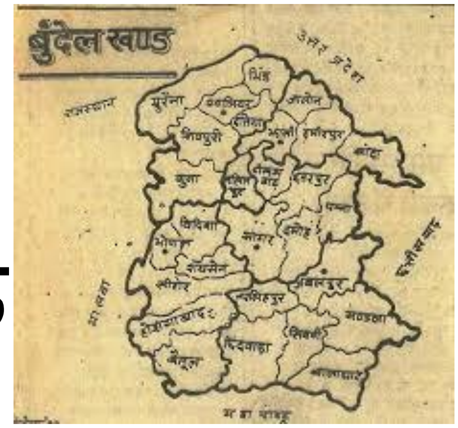
अरविन्द कुमार त्रिपाठी

द्वारा

पुरातन बान्दा, बुन्देलखण्ड का संक्षिप्त वर्णन





लोक विश्वास, लोकाचार व कुरितियां
Folk Faith, Ethos & Bad Customs

Puratan BANDA, Bundelkhand ka Sankshipt Varnan

Arvind Kumar Tripathi

ISBN : 978-93-5906-820-6

लोक विश्वास, लोकाचार व कुरितियां **Folk Faith, Ethos & Bad Customs**

अध्याय शीर्षक	लोक विश्वास, लोकाचार व कुरितियां
सर्वाधिकार	अरविन्द कुमार त्रिपाठी, लेखक
आइ एस बी एन / **ISBN**	**978-93-5906-820-6**
प्रकाशक	अरविन्द कुमार त्रिपाठी, लेखक ग्राम – अछरौन्ड, बान्दा – 210 001 उत्तर प्रदेश
मूल्य	निःशुल्क, पुस्तक मित्र को देना
सन्स्करण	प्रथम, 01 अप्रैल 2020
आवरण / मुखपृष्ठ	अरविन्द कुमार त्रिपाठी, लेखक
शब्द – संयोजन	अरविन्द कुमार त्रिपाठी, लेखक
मुद्रक	अरविन्द कुमार त्रिपाठी, लेखक
सन्दर्भ / साभार / सौजन्य	अध्याय **Reference** देखे

Chapter Heading	**Folk Faith, Ethos & Bad Customs**
Copyright @	**Arvind Kumar Tripathi, The Writer**
ISBN	**978-93-5906-820-6**
Publisher	**Arvind Kumar Tripathi** **Village - Achharaund** **Banda - 210 001** **Uttar Pradesh**
Price	**Free, Circulate to Friends**
Edition	**First, 01 April 2020**
Cover Main	**Arvind Kumar Tripathi, The Writer**
Word Compositor	**Arvind Kumar Tripathi, The Writer**
Printer	**Arvind Kumar Tripathi, The Writer**
Reference/ Gratitude/ courtesy	**Peruse Chapter - REFERENCE**

पुरातन बान्दा, बुन्देलखण्ड – लोक विश्वास का संक्षिप्त वर्णन

अरविन्द कुमार त्रिपाठी कृत पुरातन बान्दा, बुन्देलखण्ड का संक्षिप्त वर्णन

लोक–विश्वास व अन्ध–विश्वास

लोक–विश्वास

यदि किसी क्षेत्र की सभ्यता और सन्स्कृति का ह्रदय और मस्तिष्क एक साथ परखना हो तो वहां के लोक–विश्वासों को जानना अत्यन्त आवश्यक है।

बुन्देलखण्ड क्षेत्र की सन्स्कृति व सभ्यता में आदिम–युग से 19वीं शती तक अनेक परिवर्तन हुये। जिससे अनेक लोक–विश्वास स्थापित हुये, जो जन सामान्य के जीवन आधार थे। लोक–सभ्यता के केन्द्र–बिन्दु यह लोक–विश्वास निवासियों की पहचान बन गये, जिससे उनको व्यक्तित्व एवम् विचारों को परिभाषित किया जा सकता है।

बुन्देलखण्ड क्षेत्र में मूलरूप से दो प्रकार के लोक–विश्वास प्रचलित हुये हैं –

1 प्रमाणों पर आधारित या यथार्थ परक
2 अप्रमाणित या भावनात्मक या अनुभवों पर आधारित

वस्तुतः लोक–विश्वास की कसौटी ''लोक'' होता। जिसकी मान्यता मिलने पर ही लोक–विश्वास स्थायित्व प्राप्त करते हैं। प्रमाण या अनुभव के आधार पर ही विचारों की स्थापना होती है। उन विचारों को अनुकूल और विपरीत परिस्थितियों में परखने के बाद ही विश्वास किया जाता है। निरन्तर परखने की प्रक्रिया से गुजरकर समूह की स्वीकृति से ही विश्वास को लोक–मान्यता मिलती है, तब लोक–विश्वास का जन्म होता है। इस सारी प्रक्रिया में जन–मानस की लोक–कल्याणकारी भावना प्रबल होती है। लोक–विश्वासों को जितना जांचा परखा जायेगा उतनी ही उनकी जड़ें गहरी होंगीं। लोक विश्वासों को कभी–कभी तर्क की कसौटी पर भी जांचा–परखा जाता है। जिससे उसकी स्थापना पर प्रश्नचिन्ह लग जाते है, जैसे – पृथ्वी शेष नाग के फन पर टिकी है यह लोक विश्वास भूगोल ज्ञान व पुरातत्व सर्वेक्षणों के पश्चात् अप्रामाणिक हो गया। किन्तु भावनात्मक या आध्यात्मिक स्तर पर इसे हम सहर्ष स्वीकार करते हैं। चूँकि भूगर्भ में जल व मिट्टी है जिसमें सर्पो के रहने की प्रामाणिकता है। धर्म ग्रन्थों में देवी–देवताओं या पौराणिक पात्रों का जन्म फल, फूल, दोने, पृथ्वी, घड़े इत्यादि से होने की अनेक कथायें प्रचलित हैं, जो वास्तव में अविश्वसनीय प्रतीत होती हैं, किन्तु विज्ञान की प्रगति के पश्चात् परखनली–शिशु के जन्म के बाद इन कथाओं को प्रामाणिकता मिल गई है।

कभी–कभी लोक–विश्वास सार्थक परिणाम नही देते तब निराशा एवम् पीड़ा की स्थिति में मनुष्य "भाग्य में ऐसा ही लिखा था' कह कर सहनशीलता, धैर्य व साहस एकत्रित कर लेता है, किन्तु लगातार एक ही लोक–विश्वास के अपेक्षित परिणाम नहीं आते तब हम उसे अन्ध–विश्वास की कोटि में रख देते हैं।

आदिकाल से 19वीं शती तक काल परिवर्तन के साथ–साथ बुन्देलखण्ड क्षेत्र में लोक–विश्वास भी परिवर्तित होते रहे है।

प्रागैतिहासिक काल से रामायण काल तक बुन्देलखण्ड क्षेत्र में पुलिन्द, निषाद, शबर, रामठ, राउत और उसके बाद गोंड, कोल, भील सहारिया जैसी जन–जातियां यहां निवास करती थी। आदिवासी प्रकृति के अत्यन्त समीप थे। इनके प्रमाण गुहा चित्रों एवम् शैलाश्रयों पर उकेरी कला से प्राप्त होते हैं।

प्रकृति के उपयोगी, स्वरूप एवम् प्रकोप से वे भली प्रकार परिचित थे। प्रकृति पूजा के कारण ही अनेक लोक–विश्वासों ने उस समय जन्म लिया। उस काल को लोक–विश्वासों का काल कहा जाये, तो अनुचित न होगा। कृषि युग में पृथ्वी, जल, पशु, वृक्ष, वर्षा, नदी इत्यादि को देव–स्वरूप पूजा जाता था। देवततओं को प्रसन्न करने हेतु फल, अनाज व मांस इत्यादि भेंट करना सामान्य बातें थी। संभवतः पशु–बलि भी इसी काल से प्रारम्भ हुई इस प्रकार कई ''लोक–विश्वास'' भय के कारण भी प्रारम्भ हुये। प्रकृति की शक्ति से वे इतने प्रभावित थे, कि उसी को ही सब कुछ मानते थे। कर्म को महत्व देते थे। जीवन की समस्त बाधाओं को दूर करने का उपाय वे झाड़–फूँक, जादू–टोने और तन्त्र–मन्त्र को मानते थे।

गौंडो में भविष्य–सूचक लोक–विश्वास थे जैसे–गौरेया का धूल में लोटना, बगुलों का एक पंक्ति में उड़ना, चंद्रमा के चारों ओर आभा–मण्डल बनना वर्षा आगमन के सूचक माने जाते थे और यही सत्य भी है। (विज्ञान की प्रगति के पश्चात्)

लोक विश्वास, लोकाचार व कुरितियां **Folk Faith, Ethos & Bad Customs**

आत्मा की अमरता, प्रेतयोनि, दुष्ट–आत्मायें इन सभी पर सौंर जाति के आदिवासी विश्वास करते थे।

बुन्देलखण्ड क्षेत्र के उत्तर मे बसने वाली सहारिया जाति पवित्र–अपवित्र तथा पाप–पुण्य मानतीं थी। गौ–हत्या के पाप निवारण हेतु दण्ड में पूरी बिरादरी को रोटी देना पड़ती थी। मासिक धर्म होना, बच्चे का होना, परिवार में मृत्यु होना सभी अपवित्र कार्य माने जाते थे।

रामायण काल में बुन्देलखण्ड क्षेत्र में तीन सन्स्कृतियां थी।

एक जन जातीय सन्स्कृति
दो यक्ष–सन्स्कृति
तीन आश्रम सन्स्कृति

रामायण के उत्तर काण्ड में यक्षों का वर्णन है। यक्षों के पास अमृत होता है. ऐसा लोक–विश्वास था। अमरत्व की प्राप्ति ही यक्ष पूजा का मुख्य उद्देश्य होता था। महाभारत में भी कुबेर (यक्ष) को धन और अमरत्व का देवता माना गया है। आश्रमी सन्स्कृति में आर्यों केलोक–मूल्यों, मान्यताओं और विश्वासों ने भी बुन्देलखण्ड क्षेत्र की सन्स्कृति को प्रभावित किया। चेदि नरेश उपरिचर वसु द्वारा इन्द्र की पूजा की जाती थी। कल्याणकारी शिव की पूजा ने लोक–विश्वासों को दृढ़ता प्रदान की। नाग धन के रक्षक व विष्णु के शेषनाग रूप में पूजनीय थे। श्री कृष्ण ने वर्षा के देव इन्द्र के प्रकोप से बचाने के लिये गोवर्द्धन पर्वत को रक्षक का स्थान दिलाया। गोवर्द्धन पर्वत की लोक–मान्यता सभी ने स्वीकार की। उस समय चेदि यादवों के अधीन था अतः पशु पालकों का वर्चस्व था। ऐसे में पशुरक्षक लोकदेवता कारस देव का उदय हुआ। आर्य सन्स्कृति में पुनर्जन्म, स्वर्ग–नरक, पितृ लोक, मूर्ति पूजा, बलि, शव के साथ मृतक की प्रिय वस्तुयें रखना आदि लोक–विश्वास माने गये।

महाभारत काल में कर्म की महत्ता स्वीकार की गई। सत्कर्म व दुष्कर्म की व्याख्या मानव जन्म के साथ जोड़ी गई। महाभारत के युद्ध में बुन्देलखण्ड क्षेत्र के चेदि और दशार्ण जनपद सम्मिलित हुये। इसी काल में यह लोक–विश्वास दृढ़ हुआ कि युद्ध में वीरता पूर्वक लड़ने वाले को स्वर्ग–लोक प्राप्त होता है। इसी लोक–विश्वास के बने रहते बुन्देलखण्ड क्षेत्र में वीरता की अमिट परम्परा बनी, जो आने वाले समय में भी चलती रही।

इसके बाद लोक–विश्वासों को सूत्रों और स्मृतियों में संयोजित करने का प्रयत्न किया जाने लगा। जाति के अनुसार अलग–अलग विधान एवम् कार्य निर्धारित किये गये। शकुन–अपशकुन, अनुष्ठान तथा जादू–टोने का प्रभाव लोक–विश्वासों के रूप में सामने आया, किन्तु सभी में लोक–हित ही सर्वोपरि था।

लोक–विश्वासों में पशु–पक्षियों का बोलना, दिखना, शुभ–अशुभ की श्रेणी में आता था जैसे– सियार, भेड़िया, कुत्ते आदि अपवित्र समझे जाते थे। वृक्षों में भी कल्याणकारी देव–वास माना जाता था। नीम, वट, पीपल, पलाश तथा शमी पन्च वृक्ष के लाभों को लोक–हित में संदर्भित कर पूजनीय माना जाता था। इन सभी आस्था और विश्वासों को एक–सूत्र में पिरोकर सूत्रों व स्मृतियों में एकत्रित कर दिया गया। उस समय वे पवित्र सामाजिक ग्रन्थ थे।

महावीर और गौतम के समाज में भी अन्धविश्वास, कर्मकाण्ड और धर्म आडम्बरों की गहरी पैठ हो गई थी। नाग और बुद्ध के सम्बन्धित इतिहास में प्रसिद्ध और प्रमाणित हैं। जातक कथाओं में नाग का केंचुली उतारकर मनुष्य रूप धारण करना, अमूल्य मणि का स्वामी होना आदि उल्लेख मिलते हैं। अहिन्सा की विचार धारा समाज में प्रवाहित हो रही थी। जैसे मानव पशु, वृक्ष, वायु, अग्नि एवम् प्रस्तर सभी में आत्मा का वास है। अतः उन्हें मानव के समकक्ष मानकर व्यवहार करें। दुष्कर्मों को छोड़ने से मुक्ति मिलती हैं, ऐसा भी विश्वास लोक में व्याप्त था।

बुन्देलखण्ड क्षेत्र महावीर और बुद्ध के उपदेशों से भी प्रभावित रहा है। जिसका प्रभाव यत्र–तत्र देखने को मिलता है। यहां के स्मारक व मन्दिरों का शिल्प तथा बौद्ध व जैन धर्मों के ग्रन्थों का पठन–पाठन इस बात का प्रमाण भी है।

लोक विश्वास में वैचारिक क्रान्ति भागवतों और शैवों के समय से आई, जिससे जीवन–दर्शन प्रभावित हुआ।

लोक–विश्वास किसी विशेष धर्म या सम्प्रदाय में नही होते, बल्कि उनका विकास युग की चेतना से प्रेरणा पाकर क्रमिक रूप से होता है। वृक्षों में आत्मा होती है। इसका निर्धारण विभिन्न कालों में भिन्न–मिन्न प्रकार से होता

रहा है। जैसे–वैदिक काल में पीपल पर देवों का निवास माना गया है। महाभारत काल में पत्ते व फलयुक्त वृक्ष पूजनीय माना जाता था। गीता में भी पीपल महिमा वर्णित हैं। बौद्ध धर्म ज्ञान का प्रमुख प्रकरण बोधि वृक्ष से जुड़ा है। जातक कथाओं में भी वृक्षों को देवता माना गया। पीपल पर ब्रह्म व नीम पर देवी हैं ऐसा विश्वास बना रहा, जिसके चलते ब्रह्म को 'ब्राम्हण या 'वीर ब्रह्म' को यक्ष समझा जाता रहा। वर्तमान में भी वृक्षों की मान्यता तथा महत्व में कोई कमी नहीं आई। वृक्षों पर जो लोक–विश्वास थे वे वर्तमान में लगभग समाप्त हो रहे थे, किन्तु जब से वैज्ञानिकों द्वारा वृक्षों में जीवन का साक्ष्य प्रस्तुत किया गया। तब से वृक्षों के जीवन रक्षक रूप पर हमारा विश्वास दृढ़ हो गया।

बौद्ध सम्प्रदाय में भूत–प्रेत, तन्त्र–मन्त्र, ज्योतिष, रक्षा, ताबीज इत्यादि लोक विश्वास है। दुरात्माओं की शान्ति के लिये बलि का प्रचलन था। नाग धन के रक्षक होते हैं, उनको प्रसन्न करने से मन वान्छित फल प्राप्त होता हैं। इस धारणा के साथ उनकी की पूजा पुत्र प्राप्ति के लिये की जाती थी।

एरण नामक क्षेत्र में 510 ई0 के प्राप्त अभिलेखों के अनुसार सती होने का प्रमाण मिलता है। जब हूणों से लड़ते हुये सेनापति गोगराज की मृत्यु हुई, तब उसकी पत्नी पति के शव के साथ चिता पर बैठ गई। यह स्वयं को मुगलों के मृत्यु के पश्चात के व पहले के अत्याचारों से बचने का अनन्तिम उपचार था। मुगलों के अत्याचार विशेष रुप से औरतों पर जैसे व्यभिचार, अंगों को काट कर नमक मिर्च लगाना मरने तक छोड देना, खौलते तेल में जिन्दा तलना व मरने के बाद शव के साथ कुकर्म आदि जगजाहिर है। यह सती प्रथा का प्रमाण व कारण है। इसके बाद सती प्रथा पर आस्था और लोक–विश्वास के आधार पर बुन्देलखण्ड क्षेत्र में अनेक सती हुईं। इसके प्रमाण अनेक सती स्तम्भ हैं।

सती प्रथा में सभी जाति के स्त्रियां अपने पति के साथ जबरदस्ती सती हो जाया करती थी। सती स्थान पर एक चबूतरा या मण्डप बना दिया जाता था। चबूतरा या मण्डप को कुछ जगहों पर छतरी भी कहा जाता है। राजस्थान में छतरी बहुतायत में मिलती है। सती स्तम्भ भी मिलते है। यहां पर अन्धविश्वास को मानने वाले व्यक्ति बड़ी श्रद्धा से माता देखते हैं और वरदान मांगते हैं। सरकार के द्वारा यह सती प्रथा पूरी तरह से समाप्त कर दी गई है। लोग यह जानने की कोशिश नहीं करते कि आखिर उसको सती क्यों होना पड़ा? इसके पीछे क्या कारण था, गंगा जमुनी तहजीब के चलते, वह यह भूल जाते हैं कि मुस्लिम लोगों ने इलाके की जनता पर किस तरह के अत्याचार किए थे या करते है। पुस्तकों में बिल्कुल साफ लिखा है कि स्त्रियों पर कैसे–कैसे अत्याचार किए जाते थे या दो टके में बेची जाती थी।

पौराणिक काल से लोक विश्वासों पर आधारित अनेक कथायें प्रचलित हैं। इन कथाओं में पात्रों को जीवन्त बनाने के लिये वैदिक, वन्य, नागरी, देशी–विदेशी समस्त लोक–विश्वासों को समन्वित कर व्यावहारिक रूप दिया गया है। लोक–विश्वासों से गुन्थित कथायें लोक–सन्स्कृति की संवाहक होती है। अधिकांश लोक–कथाओं का आधार पुराण होते हैं, उनमें प्रामाणिक काल निर्धारण तथा क्षेत्र की पहचान सरलता से की जा सकती है।

विष्णु पुराण उद्धृत कथा से यह स्पष्ट है कि कथा विस्मृत हो जाती है, किन्तु विश्वास अमर हो जाता है जैसे सर्पों के विष से नर्मदा नदी रक्षा कर सकती है। कथानुसार नागों और गन्धर्वों के संघर्ष में नाग पराजित हुये और उनका राज्य भी छीन लिया गया था। लोगों ने नर्मदा की सहायता मांगी तब नर्मदा पुरूकुत्स को लेकर पाताल गईं। पुरूकुत्स ने गन्धर्वों का संहारकर नागों को राज्य वापस दिलाया। तब नागों ने नर्मदा को आशीर्वाद दिया कि जो नर्मदा को स्मरण करेगा उसे सांपों का भय नही रहेगा। आज भी लोक–विश्वास दृढ़ है कि नर्मदा को स्मरण करने से नाग–कोप से बचा जा सकता है।

बुन्देलखण्ड क्षेत्र के चन्देलकाल में राजनीतिक ईकाईयों का जनम हुआ। चन्देलों के शासनकाल में सैन्य शक्ति का विकास हुआ किन्तु उसी के साथ आन्तरिक ऊर्जा स्त्रोत लोक संकल्प एवम् लोक विश्वासों का भी जन्म हुआ। इस काल में वीरता को सर्वोपरि मानकर अनेक लोक धारणायें एवम् विश्वास समाज में व्याप्त हो गये। उन लोक विश्वासों को आधार, आल्हा–खण्ड ने प्रदान किया –

मानुस देइयां जा दुरलभ हैं, आहे समै न बारम्बार।
मरद बनाये मर जैबे कों, खटिया परकै मरै बलाय।
जै मर जैंहे रन खेतन में, साखौ चलो अँगाऊँ जाय।

अर्थात् – मानव योनि दुर्लभ हैं। यह जीवन बार–बार नहीं मिलता है। मनुष्य अन्त में मृत्यु को प्राप्त करता है। किन्तु खटिया पर पड़े–पड़े मरने से अच्छा है कि रण–भूमि में मृत्यु हो। यदि रण भूमि में मृत्यु हुई तो यश अमर हो जायेगा।

लोक विश्वास, लोकाचार व कुरितियां **Folk Faith, Ethos & Bad Customs**

चन्देल काल में सती प्रथा को सम्मान की दृष्टि से देखा जाता था, किन्तु आत्म हत्या को पाप समझा जाता था। देश, जाति व शासकों के प्रति अपनत्व के भाव थे जिसका प्रमाण केशव चन्द्र मिश्र द्वारा लिखित 'चन्देल और उनका राजत्व' में प्राप्त होते हैं। चन्देल काल में वीरता मय वातावरण था। इस कारण मन्दिरों के शिल्प में भी युद्ध के दृश्य देखने को मिलते हैं। देवी–देवताओं की संहारकारी प्रतिमायें काल की विचार धारा के अनुरूप ही प्रतिष्ठित की गई थीं। जैसे महोबा में ताडण्व मुद्रा में शिव, चारों दिशाओं में प्रतिष्ठित चाण्डिका देवी की प्रतिमायें तथा गोरखा गिरि पर काल–भैरव की मूर्ति आदि। चन्देल कालीन शिला लेखों में दान की महिमा अन्कित हैं। तीर्थ करना, तालाब व मन्दिर बनवाना जैसे कल्याणकारी कार्य धार्मिक लोक–विश्वास थे। व्रत रहना, गाय का दान व सेवा, गंगा नदी पाप मोचनी हैं, इस प्रकार के विश्वास जन–जन में व्याप्त थे। व्यक्ति का कर्म और भाग्य दोनों पर समान रूप से विश्वास था। पुण्यकर्म अगले जन्म में काम आते हैं ऐसी धारणा भी थी।

" रूपकषट्कम " में शिव–पार्वती की महत्ता का वर्णन है। उनको बेल पत्र समर्पित कर प्रसन्न करने का उल्लेख भी हैं।

चन्देलकाल में कृषि सम्बन्धी अनेक लोक–विश्वास थे। जैसे– खेती को प्राकृतिक आपदाओं से बचाने हेतु पूजा करना, हल–बैल पूजना, पूजनीय हैं, अमावस्या को कृषि सम्बन्धी कार्य न करने के विश्वास आदि। चन्देलकाल में गड़े हुये धन का लोक–विश्वास उदित हुआ, जिसके चलते यह प्रसिद्ध हो गया कि अजयगढ़ दुर्ग के द्वार पर एक बीजक खुदा है। जिसके आधार पर धन प्राप्त हो सकता है।

जनश्रुति है कि मन्त्रों के बल पर अनेक सिद्धियां प्राप्त होती थीं, आंखों में विशेष अन्जन लगाने से गड़ा धन दिखाई देता था, रोगों व आपत्तियों, विपत्तियों से बचने के लिये तन्त्र–मन्त्र व ज्योतिष का प्रयोग होता था।

इन लोक–विश्वासों पर राज परिवार की आस्था रही होगी और थी अतः प्रजा के प्रत्येक वर्ग की आस्था थी। इस कारण जादू–टोने भूत–प्रेत और तन्त्र–मन्त्र पर समाज का विश्वास था। उस समय प्रचलित लोकगीतों में भी लोक–विश्वासों को महत्व मिला। बांहे और आंख फड़कना शुभ, दूध से सींचने पर ननद पुत्रवती होगी और धान बोने से बहन धनी होगी इत्यादि। उस समय प्रचलित राछरे, दिवारी, देवीगीत, आल्हा आदि में ऐसे लोक–विश्वासों का समावेश था।

चन्देलकाल के बाद तोमर शासकों के समय लोक–विश्वासों में दूसरे परिवर्तन हुये। जिसमें कर्म, प्रेम, शौर्य, बलिदान व सतीत्व को वरीयता दी गई। दो धारणायें प्रबल रहीं – एक सत्त(सत्य) दूसरी पत(लाज)। देवी–देवताओं और आदर्श नारी–पुरूष में 'सत्त' होता है। इसी सत्त से वे विश्वास योग्य बनते हैं। कुल, राज और देश की पत रखना ही प्रत्येक का धर्म है।

'छिताई चरित' मे लिखा है – विधना ने सुख और दुःख मस्तक पर लिख दिये है।

उस समय कर्म व भाग्य एक दूसरे के पूरक रहे। लोक–सन्स्कृति में दान व युद्ध को महत्व दिया जाता था। जनश्रुति के आधार पर– पुत्र होना उद्धार तथा मोक्ष प्राप्ति का साधन माना जाता था।

लोक–विश्वासों में वर्जनाओं का स्थान भी था।

1) बिनसै धर्म किये पाखण्डु।

2) बिनसै वेदु सुरा–रस भीनें।

3) बिनसै कला कु–ठाकुर सेवा।

उपरोक्त तीनों अर्द्धालियों में जन में व्याप्त रूढ़ियों का विरोध किया गया है– पाखण्ड करने से धर्म, वेदों का ज्ञान नष्ट होता है तथा बुरे स्वामी या गुरू की सेवा करने से कला नष्ट हो जाती है। कला का ज्ञान अच्छे गुरू की सेवा से ही हो सकता है इस बात को प्रबलता से स्वीकार किया जाने लगा। इसे अकाट्य सत्य के समान स्वीकार किया गया। गुरू–शिष्य परम्परा के प्रति श्रद्धा भाव उत्पन्न हुआ।

यथा राजा तथा प्रजा

मध्यकाल मे बुन्देलों के शासनकाल मे लोक–विश्वासों पर गौड़ों का प्रभाव अधिक रहा। इस समय भी भक्ति–भावना, मूर्ति पूजा तथा भूत–प्रेत के अस्तित्व पर विश्वास बना रहा। लोक–देवताओं की भक्ति ने समाज को इतना प्रभावित किया कि जाति–गत भावनायें गौण हो गई।

जात–पाँत पूछे ना कोई, हरि को भजे सो हरि का होई।

इस भावना ने समाज को एकता के सूत्र में बान्धने का काम किया। इसी प्रकार ईश्वर पर अगाध विश्वास था।

राम भरोसे जे रहें, परबत पे हरियाराँ।

'जिये राम राखे, ताय कोउ न चाखे।

इस प्रकार भक्ति–भाव पूर्ण कहावतों का समाज पर बहुत प्रभाव था।

तोमरों के पतन के बाद बुन्देलखण्ड क्षेत्र पर मुगलों के लगातार आक्रमण से कई रियासतों ने आत्म–समर्पण कर दिया। इस समय लोक–सन्स्कृति का विकास भी कम हुआ इस कारण लोक–विश्वासों में परिवर्तन नहीं हुआ। पिछले समय से जो लोक–विश्वास चले आ रहे थे, यदा–कदा उन्ही को स्वीकार किया जाता रहा। इनमें भाग्य, धर्म, कर्म, युद्ध, सत्त, पत, शकुन–अपशकुन, भूत–प्रेत, जादू–टोने, ज्योतिष आदि की प्रमुखता रही। तुलसी रचित भक्ति काव्य ने लोक–सन्स्कृति को प्रभावित किया, जिससे अनेक लोक विश्वास उपजे। यह लोक–विश्वास नीति–परक भी थे, जिनमें से कुछ इस प्रकार थे–

जड़–चेतन–गुन–दोष, मय बिस्व कीन्ह करतार
अर्थात् ईश्वर ने सम्पूर्ण विश्व को बनाया है, उसमें जड़, चेतन और गुण–दोष भी उन्ही के बनाये हैं।

भलौ भलाई पे लहैं, लहै निचाई नीच।
अर्थात् भले व्यक्ति भलाई करते हैं और नीच सदैव नीचता करते हैं।

रामचरित मानस की लोक–कल्याण की चौपाईयां और दोहे आदि भक्ति–भाव से जन–मानस ने आत्मसात किये। यही बाद में लोक विश्वास में परिणित हो गये। दोहावली में तुलसी द्वारा लिखित ज्योतिष लोक–विश्वास बन गया। दोहावली में वर्णित शुभ–अशुभ, तिथियां, नक्षत्र इत्यादि जन–सामान्य में ज्यों के त्यों स्वीकार कर लिये गये। रामचरित मानस को वास्तव में लोक–विश्वास ग्रन्थ कहा जाये तो अतिश्योक्ति न होगी। बुन्देलखण्ड क्षेत्र के चित्रकूट क्षेत्र में श्री राम प्रवास के प्रमाण और साक्ष्यों ने ग्रन्थ पर विश्वास और भी बढ़ा दिया था।

रीतिकाल के कवि केशव ने भी रण–भूमि में वीरतापूर्ण लड़ने वाले योद्धा को स्वर्ग का अधिकारी बताया था। जहांगीर चंद्रिका में भाग्य व कर्म एक दूसरे के पूरक हैं इसके सम्बन्ध में लोक–विश्वास का वर्णन है–

करम फलै उद्धिम करे, उद्धमहि करमहिं पाइ।

प्रेम सम्बन्धों पर भी लोक–विश्वासों का प्रभाव पड़ा। हरिसेवक मिश्र की काम रूपकथा तथा बोधा के विरह वारीश इसके उदाहरण हैं। उनमें लिखा है कि प्रेम का पथ तलवार की धार है। चकोर चन्द्रमा के प्रेम में चन्द्रमा जानकर अन्गार खा लेता है।

इसी प्रकार कमल व सूर्य, मछली और जल, चुम्बक और लोहा इत्यादि प्रेमविश्वास के प्रतीक लोक में प्रचलित हो गये। 18वीं शती में ''छत्र प्रकाश'' और ''जगत राज की दिग्विजय'' ऐसे ऐतिहासिक ग्रन्थ थे जो उस समय की लोक–सन्स्कृति के दर्पण कहे जा सकते हैं। इनमें राष्ट्रीय चेतना, संघर्ष, शत्रुता, राष्ट्रीय व अराष्ट्रीय तत्वों से सम्बन्धित लोक–विश्वासों को लोक–सन्स्कृति का अंग मान लिया गया।

धामी सम्प्रदाय का पवित्र ग्रंथ ''कुलज़मस्वरूप'' में हिन्दु (मुसलमानों???) में व्याप्त अन्धविश्वासों की आलोचना की गईं। मूर्ति पूजा का विरोध किया गया। किन्तु उस समय लोक–विश्वासों की व्याप्ति इतनी अधिक थी कि समाज

उनके नकारात्मक पहलुओं को देखने या समझने में कोई रूचि नहीं रखता था। इस कारण ग्रन्थ को समाज में मान्यता और प्रतिष्ठा नहीं मिल सकी।

उस समय समाज में तन्त्र–मन्त्र, जादू–टोना, बलि, गड़े धन की प्राप्ति, परमार्थ को पुण्य तथा स्वार्थ को पाप समझने की मानसिकता थी। जातिगत भेद भाव भी पनपने लगा था। परस्पर जाति विरोधी भाव टकराने लगे। जातियों के कार्यों के प्रति लोक–विश्वासों की भावना आ गई जैसे – मन्त्र व शास्त्र पढ़ने का अधिकार पंडित का है(ब्राह्मण का नही???), वीरता से लड़ना क्षत्रिय धर्म है।

19वीं शती में लगभग पूर्व लोक–विश्वास ही समाज में मान्य रहे। 1842 ई0 में राजा पारीछत और अंग्रेजों के मध्य हुये युद्ध के प्रभाव से लोक–जागृति हुई। उसी को आधार मानकर लोक–काव्य भी लिखे गये।

1857 ई0 में स्वतन्त्रता संग्राम में असफल होने के बाद बुन्देलखण्ड क्षेत्र में प्रचलित पुराने लोक–विश्वासों की जड़ें हिल गई।

19वीं शती के अन्त में ईसुरी रचित फागों ने लोक–विश्वासों को विभिन्न रंग प्रदान किये। ऐसे में विचारों में परिवर्तन आया जैसे– धर्म के बिना कर्म नहीं हो सकता, योग साधना के बिना स्वर्ग की प्राप्ति असम्भव है, गंगा मोक्ष–दायिनी तथा पाप नाशिनी हैं, शरीर का विश्वास करना व्यर्थ है, वह तो नश्वर है, आत्मा ही चिरन्तन सत्य है। इसी प्रकार सन्सार ओस की बूंद के समान है जो हवा से ढुलक जाती हैं, जिस प्रकार विपरीत प्राकृतिक आपदाओं के कारण संसार समाप्त हो जाता है।

बड़े भाग मानुस तन पावा। अर्थात् मनुष्य योनि बहुत भाग्य से मिलती है

यही भावना जन–जन का विचार था, इस कारण जीवन का सदुपयोग करें। इसी प्रकार अनेक नये लोक–विश्वासों ने जन्म लिया।

मध्य युग में लोक–कथाओं ने युगों से चले आ रहे लोक–विश्वासों को नीति–परक कसौटी पर खरा साबित कर दिया। करनी का फल मिलता है, भाग्य बलवान होता है, बलि देने से सूखे तालाब में पानी भर जाता है, मन्दिर व तालाब बनवाना पुण्य का कार्य है, मेहनत की कमाई भली है, जन्म पत्री से शुभ–अशुभ की जांच कराना, इत्यादि लोक–विश्वास, उस समय प्रचलित लोक–कथाओं में पढ़ने को मिलते हैं।

मध्य युग में वीर–भाव भी लोक–कथाओं में प्राप्त होत है। मनो गूजरी, मथुरावली, लक्ष्मीबाई, लोहागढ़, धन सिंह आदि की वीर गाथायें प्रचलित रहीं।

लोकगीतों में भी लोक–विश्वासों का समन्वय मिलता है जैसे– देवी गीत, राछरे, लमटेरा, दिनरी आदि नीति परक लोक–विश्वासों के सम्वाहक रहे। लोक देवता जैसे गौड बाबा, कारस देव, लाला हरदौल, ठाकुर बाबा आदि के चारित्रिक विशेषताओं ने लोक–विश्वासों को आधार प्रदान किया। घर, समाज, पशु, खेती आदि के रक्षक यह देवता सम्पूर्ण मानव जाति के पूज्य थे। जन–सामान्य इनमें ईश्वरीय रूप में भी अपनत्व का भाव देखता था। जिन लोक–विश्वासों को आदर्श जीवन के लिये आवश्यक माना जाता था, उन्हीं का समन्वित रूप इन लोक देवताओं के व्यक्तित्व में देखकर मानव चमत्कृत था। लोक–देवताओं के कल्याणकारी स्वरूप की पूजा करने के लिये जन–सामान्य ने प्रत्येक गाँव में निश्चित देव स्थान बनाये। गाँवों में स्थान–स्थान पर चबूतरे और मढ़ियों की स्थापना हुई गाँव के 'गेवड़े' (आबादी के निकट) पर, खेतों की मेड़ों पर, गलियों में लोक–देवताओं की स्थापना की गई। वे प्रत्येक ग्राम–वासी के अपने देवता थे जो हर सुख दुःख में उनकी सहायता करते थे। समय के साथ साथ में यह लोक–विश्वास दृढ़ होता गया। नियमित या निश्चित तिथि पर पूजन करना, भजन–कीर्तन, भेंट, चढ़ावा तथा साधारण व सर्व सुलभ–प्रसाद इत्यादि कार्यों ने लोक देवताओं की लोकप्रियता को बढ़ावा दिया। सन्स्कृत में लिखे वेद–शास्त्र तथा धार्मिक अनुष्ठानों की जटिल प्रक्रियायें साधारण व्यक्ति की ईश्वर से दूरी बनाये रखती थी। वह दूरी लोक–देवता के पूजन में नहीं थी। मनचाहा आदर योग्य देव व्यक्तित्व ही जन–सामान्य को अपने लोकदेव के समीप ले जाता था। समाज के हित में कार्य करने का महत्वपूर्ण गुण लगभग सभी लोक–देवों में विद्यमान है।

वर्तमान में बुन्देली लोक–जीवन में घटोई बाबा, सिद्ध बाबा, भैंसासुर, मैकासुर, कारस देव, लाला हरदौल, दूल्हा देव, भैंरो बाबा, गौड–बाबा, ठाकुर बाबा, खाती बाबा आदि को लोक देवता के रूप में पूजा जाता हैं।

लोक विश्वास, लोकाचार व कुरितियां **Folk Faith, Ethos & Bad Customs**

अरविन्द कुमार त्रिपाठी कृत पुरातन बान्दा, बुन्देलखण्ड का संक्षिप्त वर्णन

मैकासुर– मैकासुर या भैंसासुर या महिषासुर दुधारु जानवरों के रक्षक देवता हैं। इनकी स्थापना मिट्टी के कंगूरेदार टीले के रूप में की जाती है। अहीर जाति भैंसासुर का विशेष पूजन दीपावली के दिन करते हैं।

घटोई बाबा– घटोई बाबा का स्थान नदी के किनारे का घाट माना जाता है। वहाँ पत्थर के रूप में घटोई बाबा की स्थापना की जाती है। ऐसा लोक–विश्वास है कि यह देवता नदी सम्बन्धी दुर्घटनाओं से रक्षा करते हैं। विवाह के बाद यदि नव–विवाहिता पहली बार नदी पार कर रही हो तो पहले घटोई बाबा को नारियल, पूड़ी, शक्कर या मिठाई चढ़ाने की परम्परा है। जल से जुड़ा व्यवसाय करने वाले जैसे – मछुवारे, ढ़ीमर और धोबी इनको अवश्य पूजते है।

मेड़िया बाबा– इन्हे मिड़ोई बाबा भी कहा जाता है, यह गांव के रक्षक देव है। इनका स्थान गाँव की सीमारेखा के पास प्रवेश स्थान पर होता है। मेड़ पर इनका स्थान होता है। इसी कारण मिड़ोई बाबा कहलाते हैं। दो ईटों को त्रिकोणनुमा जोड़ कर इनका देव स्थान बनता है। सफेद कपड़े का झण्डा लगाया जाता है।

उपरोक्त कुछ उदाहरणों से यह स्पष्ट है कि लोक–जीवन में व्याप्त कठिनाईयों और भय से मुक्ति पाने के लिये सम्बन्धित देवों की पूजा करने का विधान है। यही लोक–विश्वास अनेक वर्षों बाद भी लोक–देवताओं के स्थानों और मान्यताओं को जीवित रखें हैं। लोक–विश्वासों में केवल ऐसे देवता ही पूजनीय नही हैं जो काल्पनिक अस्तित्व रखते हैं बल्कि, ऐतिहासिक पुरूष भी ऐसे हैं जो अपने कार्यों से लोक–देवताओं की श्रेणी में आ गये। बुन्देली सन्स्कृति के रक्षक लाला हरदौल प्रत्येक ग्राम में प्रत्येक वर्ग में समान रूप से आदरणीय हैं। उनके आदर्श चरित्र का गुणगान लोकगीतों और लोकोक्तियों के माध्यम से किया जाता है।–

महाराज बुन्देला,   नगर ओरछा म्यान।
जियत किये बहु पुण्य,   मरे पैं थपे जगत्त में आन।

हरदौल– लाला हरदौल की महान बलिदान की अनुकरणीय गाथा ने भाभी और देवर के सम्बन्धों को माता–पुत्र के रूप में प्रतिस्थापित कर समाज में प्रतिष्ठित किया।

लाला हरदौल के मरणोंपरान्त की एक चमत्कारिक घटना भी प्रचलित है जो लोक–सन्स्कृति व लोक–विश्वास दोनों को एक साथ प्रस्तुत करने मे सक्षम है। हरदौल की बहन कुंजावति अपनी पुत्री के विवाह में भात मांगने ओरछा आईं। राजा जुझार सिंह पर हरदौल की हत्या का कलन्क था। सामाजिक रूप से उनको बहिष्कृत कर दिया गया था। तब कुंजावति लाला हरदौल की समाधि पर गईं। कुंजावति के विलाप से हरदौल द्रवित होकर विवाह में भात लेकर गये। वे किसी को दिखाई नही दिये। सभी चमत्कृत थे। विवाह में बुन्देली परम्परानुसार मामा पंगत में घी परोसता है। उस समय हरदौल ने घी तो परोसा किन्तु दिखाई नही दिये। दूल्हे की जिद पर केवल उसे ही दर्शन मिला। बाद में वही दूल्हा ''दूला देव'' के नाम से हरदौल के सहयोगी लोक देवता के रूप में प्रतिष्ठित हुये। लाला हरदौल ने 12 गाँव विवाह के अवसर पर उपहार स्वरूप दिये थे। इस कारण उन गाँवों में हरदौल का पूजन नही होता है।

दूलादेव– दूलादेव का चबूतरा अधिकांशतया गाँवों में हरदौल के चबूतरे के निकट ही बनाया जाता है। चढ़ावे में दूल्हे की वेशभूषा, व्यंजन, नारियल तथा सफेद या केसरिया या लाल रंग के कपड़े का झंडा चढ़ाया जाता है।

हरदौल के भात ले जाने वाली घटना का वर्णन बुन्देली वैवाहिक लोक गीतों में बहुत सुन्दरता से किया गया है।–

महासोर भओ लाला हरदौल भात दऔ।   महासोर...................
लाला की करनी कछू बरनी न जात,
मण्डप के नैचे सामान न समात।   महासोर...................
दान दायजो सुहात, जड़े गाने जेवरात
सब नओ नओ।   महासोर...................

इस घटना के बाद से ही बुन्देलखण्ड क्षेत्र में यह लोक–विश्वास प्रचलित है कि विवाह का पहला न्योता लाला हरदौल को दिया जाता है। जिससे विवाह में किसी प्रकार की कमी न हो पाये।

कारस देव– दूसरे ऐतिहासिक लोक–देवता हैं कारस देव, वे पशु रक्षक देवता हैं। तन्त्र मन्त्र की सिद्धि हेतु भी इनकी पूजा की जाती है। हैहयवंशी राजा अजयपाल का राज्य नर्मदा के किनारे बसी महिष्मती नगरी से लेकर बेतवा के किनारे पर बसे ओरछा नगर तक था।

जनश्रुति है कि राजा अजय पाल ने शंकर की साधना व तपस्या से अनेक मन्त्र सिद्ध कर चुके थे। इनका प्रयोग वे लोक–कल्याणकारी कार्यों में करते थे। वे साँप का विष उतारना, अनिष्ट तथा विध्न बाधायें दूर करना, जानवरों के रोग निवारण आदि के लिये उन मन्त्रों का प्रयोग करते थे। उनके दो शिष्य थे – कारसदेव व हीरा मन। कारस देव भी शिव उपासक थे उन्होनें जीवन–पर्यन्त लोक की भलाई के लिये कार्य किये। लोक में वे देव–पुरूष के रूप में पूजित हैं उनके चबूतरे प्रत्येक ग्राम में मिल जाते है। दीपावली, होली व दशहरे पर कारसदेव की विशेष पूजा होती है। प्रत्येक माह शुक्ल पक्ष की चतुर्थी को भी चबूतरों पर भक्त एकत्रित होते हैं। समाज में कारस देव के प्रशस्ति गीत 'गोट' के नाम से प्रचलित हैं। शिव के डमरू के आकार की ढांक प्रमुख संगत वाद्य यन्त्र हैं। <u>विशेष दिवसों पर किसी निश्चित व्यक्ति पर लोक–देवता का भाव प्रगट होता है, उस व्यक्ति को "घुल्ला"</u> कहते हैं। वह सभी भक्तों के कष्ट सुनकर झाड़–फूँक करता है तथा समस्याओं के समाधान बताता है। "घुल्ला" के बताये गये निर्देश कारसदेव के आदेश मानकर जन–सामान्य उनका पालन करता है। संभवतः मानसिक संतुष्टि व कारसदेव की लोक रक्षक छवि ही इस लोक–देवता पर विश्वास करने में सहायक है। कारसदेव का पूजन सामूहिक रूप से पूरा गाँव करता है। भाद्रपद माह में अमावस्या या पूर्णमासी को शगुन विचार कर पुजारी जी कारसदेव का पूजन करना निश्चित करते हैं। पशुपालक इस पूजा को आम भाषा में "रोग हकाना" कहते हैं। पूजन के लिये पूरे गाँव से चन्दा लेकर धन एकत्रित करते है।

भाद्रपद माह में वर्षा में अधिकांश पशु बीमारियां फैलती हैं, इसी कारण यही माह "रोग हकाने" के लिये उत्तम माना जाता है। इस पूजन का उद्देश्य यही रहता है कि गाँव भर के पशु रोग मुक्त रहें। पूजा वाले दिन सभी कारसदेव के चबूतरे के समीप एकत्रित हो जाते हैं। पुजारी नये वस्त्र धारण कर पूजा प्रारम्भ करता है। गाँव के सभी पशुओं पर नीम के झोंके(नरम डाल) से दूध छिड़क कर उन्हें पवित्र करता है, फिर उन्हें आम के पत्तों की बंदनवार के नीचे से निकाला जाता है। पुजारी अभिमंत्रित उरद की साबुत दाल के 5 या 7 दाने पशु पालकों को देकर उनसे "सीधा" (आटा, दाल, चावल आदि) प्राप्त करता है। उरद के दाने "चौंपयाई बखरी" (पशु बांधने का स्थान) के प्रवेश द्वार पर लाल कपड़े में बांधकर टांग दिये जाते हैं। कारसदेव के चबूतरे पर "गोटे" गाई जाती हैं। अर्द्ध रात्रि में गांव की सीमा रेखा के चारों कोनो पर कीलें गाड़ दी जाती हैं जिसे "रोंगों" को कीलना कहते है। गाँव की सीमा पर बिना धार तोड़े शराब से रेखा बनाते हैं, जिसे दुरात्माओं का प्रवेश निषिद्ध करना मानते हैं। सभी पशुपालक हाथों में सुलगते कन्डे लेकर रगड़ते हुये गांव की सीमा रेखा तक हो–हो का शोर करते हुये जाते हैं, इसे "रोग हकाना" कहते हैं। पूजा में प्रयुक्त नीम व कंडो का धुंआ रोग नाशक और वातावरण में कीटाणुओं को नष्ट करने में सहायक समझे जाते हैं।

लोक–विश्वास युगों से जन–मानस में व्याप्त हैं, जो अपनी लोक–कल्याणकारी अवधारणा के कारण ही जीवित है। लोक देवताओं पर विश्वास यह सिद्ध करता है कि व्यक्ति अपने कार्यों से युग–युगान्तर तक अमर रहता है सामाजिक भलाई के कार्य ही व्यक्ति को महान बनाते हैं। सम्पूर्ण लोक को अपने व्यक्तित्व व कार्यों से प्रभावित करना और विशाल जन समूह में विश्वास उत्पन्न कराना किसी साधारण व्यक्ति के वश की बात नही है।

बुन्देलखण्ड क्षेत्र में मध्यकाल में बुन्देलो का शासन रहा हो या गौंड़ो का। किन्तु गौंड़ो में प्रचलित लोक विश्वासों का प्रभाव इस अंचल में अधिक रहा है। गौड़ों की गढ़ियां और उनके अवशेष सम्पूर्ण बुन्देलखण्ड क्षेत्र में पाये जाते हैं। गढ़ा मण्डला के गौंड़ सत्ता में रहे हैं इसलिये उनके विश्वास अधिक प्रचलित हुये। रजस्वला स्त्री की परछाईं भी अपवित्र मानी जाती थी। मनुष्य पर पड़ने वाली आपत्तियां/ विपत्तियां भूत–प्रेतों के कुपित होने से आती हैं, ऐसा लोक–विश्वास है। मूर्ति पूजा भी गौंड़ों की चलाई गई परम्परा है।

लोक–विश्वास में भक्ति भाव ही दृढ़ता प्रदान करता है। राम–सीता तथा राधा कृष्ण की जोड़ी से सभी प्रभावित हुये। लोक–सन्स्कृति में अपनी मर्यादा और वीरता के लिये राम को तथा सतीत्व धर्म पालन में सीता के आचरण अनुकरणीय माने जाते हैं। उनका व्यक्तित्व लोक में ऊर्जा संचार करता है। दूसरी ओर राधा–श्याम की जोड़ी प्रेम के उदान्त रूप को प्रकट करती है। वे मानव मन में प्रेम की सरसता प्रवाहित करते हैं। यह लोक–विश्वासों में प्रेम के अलौकिक रूप का प्रगटीकरण हैं।

लोक ने भावों को निरपेक्षता से अपनाया। जब जाति व धर्म लोक–विश्वासों के समक्ष निर्बल हो गये तब वे लोक की शक्ति बने।

लोक–विंश्वासों का प्रभाव लोकगीतों पर भी पड़ा। लोक–गीत जन–सामान्य की चेतना को प्रभावित करते हैं, जिससे मानसिक प्रभाव गहरा होता है। लोक–गीत पीढ़ी दर पीढ़ी गाये जाते हैं। उनके भाव सदा लोक में व्याप्त परिस्थितियों को चित्रित करते हैं–

गोरी हारै न जाओ – 2
पीपर के पत्तन में देवता . . . . . .

अर्थात् पति के हृदय में लोक–विश्वास है कि पीपल को वृक्ष पर देवता का निवास है इस कारण वह पत्नी को जाने से रोक रहा है।

लोक–कवि ईसुरी की फागों में जीवन की सत्यता की बात कही गई है।

यारी सदा निबाय रइयो, बीच बिसर जिन जइयो।
अर्थात् दोस्ती सदा निभानी चाहिये उसे कभी भुलाना नही चाहिये।

इसी प्रकार मृत्यु के अंतिम सत्य के बारे में वे कहते हैं –

इक दिन होत सबई को गोनों, होनों उर अनहोंनो
जाने परत, सासरें सबकों, बुरो लगें चांय नौनो . . . . . .
अर्थात् होनी या अनहोनी किसी भी माध्यम से मृत्यु सभी की निश्चित हैं। सबको ईश्वर के पास जाना है चाहे अच्छा लगे या बुरा।

इसी प्रकार–

मानुस होने कै ना होने, रजऊ बोल लेओ नोंने।
अर्थात् अगली योनि मनुष्य की हो या नही सबसे प्रेम से बोलो।

बीसवीं शती में बुन्देलखण्ड क्षेत्र की सांस्कृतिक चेतना में बदलाव आ गया। दो प्रकार की भावनायें समाज में उदित हुई– एक राष्ट्रीय चेतना की, जिसने स्वतन्त्रता प्राप्ति हेतु संघर्ष करना सिखाया।
दूसरी वैज्ञानिक धारणा जिसने लोक–विश्वासों पर बौद्धिक प्रभाव डाला।

इस समय विभिन्न भावों की काव्य–धारायें प्रवाहित हुई। 1903–04 ई0 में मैथलीशरणगुप्त रचित मुक्तक, 1907–08 ई0 में गीत व मुक्तक तथा 1912–14 ई0 में भारत–भारती के मुक्तक समाज में क्रांतिकारी परिवर्तन लाने में सफल रहें।

इस युग में प्राचीन लोक–विश्वासों व नई वैज्ञानिक विचार धारा का टकराव समाज को दुविधा की स्थिति में ले गया। 1842 ई0 में राजा पारीछत और अंग्रेजों की लड़ाई के बाद हर–बोलों द्वारा प्रत्येक ग्राम व नगर में राष्ट्रीय चेतना का विकास लोक–काव्य के माध्यम से किया गया। 1857 ई0 के संघर्ष को लोक कवियों– खान फकीरे, दादूराम, गंगा सिंह और ईसुरी ने अपने लोक—काव्य में वर्णित किया। 1942 ई0 एवम् 1947 ई0 में गीतों में भी स्वतन्त्रता आन्दोलन की झलक मिलती है। गीतों में स्वदेशी आंदोलन, खादी, शासकों का अत्याचार तथा उनकी बगावत इत्यादि विषय प्रमुख थे।

पुरातन व नवीन विचार धाराओं के संगम से लोक–विश्वासों के मिश्रित रूप सामने आये–
मानव जीवन की क्षण–भंगुरता, मानव जन्म दुर्लभता, ईश्वर पर विश्वास, जन्म भूमि स्वर्ग से उत्तम जैसे लोक विश्वास, सभी वर्गों में समान रूप से प्रचलित हुये। बीसवीं शती के लिये मुख्य विचारधारा इस प्रकार थी—

आगऔ अब कलजुग को पारो,
सतयुग दै गऔ टारो।
अर्थात् सतयुग चला गया और अब कलयुग आ गया है।

वैज्ञानिक विचारधारा ने पाप–पुण्य, भूत–प्रेत, तन्त्र–मन्त्र, स्वर्ग–नरक आदि लोक–विश्वासों पर प्रश्न चिन्ह लगा दिये। मनुष्य ऐसा प्राणी है जो सरलता से अपने अतीत को त्यागता नही है, वर्तमान में जीते हुये भविष्य की चिन्ता करता है। इसी सोच के चलते बुन्देली समाज में आज भी बहुत से लोक–विश्वास हैं जो समय के साथ समाप्त नही हुये हैं। उनमें थोड़े बहुत परिवर्तन अवश्य हुये हैं। जीवन को प्रत्येक क्षेत्र व कार्यों में इन लोक–विश्वासों का महत्व वर्तमान में भी स्वीकार्य हैं। प्रायः ग्रामीण क्षेत्र इन लोक–विश्वासों के पोषक हैं। शहरी क्षेत्रों का आडम्बरयुक्त जीवन भले इन्हें स्वीकार न करने का दिखावा करें, किन्तु मन ही मन शुभ–अशुभ के कारण इन लोक विश्वासों को स्वीकार करता है।

लोक–विश्वास सदैव गतिशील रहे हैं। आदिम मानव वन्य सन्स्कृति से लेकर वर्तमान वैज्ञानिक युग तक विभिन्न पड़ावों से गुजर कर अनेक लोक–विश्वासों और उनकी सार्थकता पर विवेचना करना क्या उचित होगा?

प्रकृति सम्बन्धी लोक–विश्वास

वृक्षों में जीवन है। तुलसी, पीपल, वट, आंवला, केला आदि की पूजा से इच्छापूर्ति होती है तथा दीर्घायु जीवन प्राप्त होता है। वैज्ञानिक एवम् आयुर्वेदिक दृष्टि से यह सभी वृक्ष गुणकारी हैं। पूज्य व फलदार वृक्ष को सींचना पुण्य है, इस लोक–विश्वास भावना में हमारा लाभ भी निहित है। यदि फलदार पौधे की निरन्तर देख–रेख तथा सिंचाई की जाये तो परिपक्वता की स्थिति आने पर हमें स्वास्थ्यवर्धक वायु व फल प्राप्त होगें।

यह लोक–विश्वास वर्तमान में पर्यावरण संरक्षण को सम्बल प्रदान करता है। पितृ–पक्ष में कौओं को पितृ स्वरूप मानकर भोजन कराना। इसी प्रकार व चींटी, मछली, चिड़िया आदि को चुगाने का लोक–विश्वास भी धरती, आकाश और जल में रहने वाले प्राणियों पर दया, प्रेम व आश्रय देने का भाव उत्पन्न करता है। इनमे लोक–कल्याण का भाव निहित हैं।

गाय को मोक्ष दायिनी मानकर माता के रूप में पूजना एक प्रचलित लोक–विश्वास है। चूंकि गाय का दूध पौष्टिक और सुपाच्य है। उसका पुत्र बैल कृषि–सम्बन्धी कार्यों में सहायक है। गाय का गोबर शुभ, कीटनाशक व आयुर्वेदिक गुणों से युक्त होने के कारण शुभ कार्यों में प्रयुक्त होता है। गौ–मूत्र सेवन दीर्घायु प्रदान करता है। जिस पशु में इतने गुण एक साथ होंगें, वह समाज में निश्चित ही पूजनीय होगा।

इसी पक्ष में परासन (जालौन) में पितृ मेले के अवसर पर मछलियों को पितृ–तुल्य मानकर पिता और उन्हें नथ पहनाना अपने स्वर्गीय मा को मृत्यु के पश्चात् भी स्मरण रख, प्रतिवर्ष प्रकृति के माध्यम से उन्हें स्मरण रखना, यह परम्परायें ही बुन्देली लोक–सन्स्कृति को आदरणीय बनाती हैं।

धार्मिक–लोक विश्वास

वर्ष भर विभिन्न देवी–देवताओं की पूजा, इच्छा पूर्ति हेतु की जाती है। ऐसा लोक–विश्वास है कि शुभ अवसरों पर देवताओं की पूजा और निमन्त्रण देने से कार्य निर्विध्न सम्पन्न होते हैं। मनोवैज्ञानिक तथ्य है कि मनुष्य को प्रत्येक कार्य हेतु आत्मिक–बल की आवश्यकता होती है, जो ईश्वर की पूजा से प्राप्त होता है। बुन्देलखण्ड क्षेत्र में पुराने लोक–विश्वासों से यह सिद्ध हो गया है कि ईश्वर सर्वोपरि है। उसकी साधना ही मोक्ष का मार्ग है। ऐसी स्थिति में ईश्वरीय शक्ति की उपासना मानव कार्यों की सफलता में मानसिक प्रभाव डालने में सहायक होगी। लोक–विश्वास है कि आत्मा अमर है। जन्म–मरण का चक्र अनवरत चलता है, पुनर्जन्म होता है। यह विश्वास व्यक्ति के सम्पूर्ण जीवन को प्रभावित करता हैं, जिससे वह आध्यात्मिक और अच्छे सामाजिक कार्य करने को प्रेरित होता है।

गंगा स्नान पाप नाशक है, तीर्थ–यात्रा व गरीबों को दान देने से पुण्य प्राप्त होता है। पाप–पुण्य जीवन में इस प्रकार घुले मिले हैं जिससे व्यक्ति पुण्य कार्य करने में जुटा रहता है। पाप का भय तथा पुण्य का लोभ व्यक्ति को दुष्कर्मों से विमुखता तथा सद्गुणों का पालन करने को प्रेरित करता है।

देवी–देवताओं को प्रसाद चढ़ाना, व्रत–उपवास करना, भजन–कीर्तन करना आदि भी लोक विश्वास है। सम्पूर्ण संसार में शक्ति की उपासना इन्हीं माध्यमों से की जाती है। मानव जन्म मिलने पर संसार के समस्त सुखों को भोग करने वाला सर्वोच्च प्राणी ईश्वर के प्रति आभार प्रगट करने का सरल मार्ग इसी को मानता है। व्रत–उपवास आत्म नियन्त्रण, पाचन शक्ति सुचारू होना तथा सन्तुलित दीर्घायु जीवन जीने का सन्मार्ग है।

स्वर्ग–नरक की कल्पना, मानव–जीवन को नियन्त्रित आचरण करने को प्रेरित करती हैं। नर्क की काल्पनिक यन्त्रणायें और स्वर्ग के सुख, मनुष्य को सद्कार्य करने हेतु प्रेरित करते हैं। ईश्वर सर्वत्र विद्यमान है, इस लोक विश्वास का प्रभाव हमारे छोटे–छोटे कार्यों पर भी पड़ता है। हम सदैव सुरक्षित अनुभव करते हैं। एकान्त मे भी गलत कार्य करने से डरते है। पाप–पुण्य का लेखा–जोखा ईश्वर के पास है– यह भाव हमारे कार्यों के शुभ–अशुभ होने पर निर्भर करता है। यह समस्त भावनायें मिलजुल कर सुन्दर समाज की रचना में सहायक सिद्ध होती है।

वैज्ञानिक तथ्य है जब हम शान्त–चित रहते हैं तब शरीर की रक्त–संचार गति नियंत्रित रहती हैं जिससे हम अनेक बीमारियों से बच सकते हैं। चित्त शान्ति का सर्वोत्तम उपाय है– योग–साधना, जप–तप। इनका लोक–विश्वास में

महत्वपूर्ण स्थान है। सत्य यह है कि हवन से वात्तावरण शुद्ध होता हैं। कीटाणु धुंये से नष्ट हो जाते हैं। भले ही लोक–विश्वास में यह माना जाये कि हवन से देवता प्रसन्न होते हैं।

अति प्राकृत लोक–विश्वास

भूत–प्रेत की कल्पना समाज में बहुत पहले से व्याप्त है। यह तथ्य अत्यन्त सरलता से स्वीकार किया जाता है कि भय मनुष्य को भीरू बनाता है। भूत–प्रेत से सम्बन्धित कपोल कल्पनायें कहानियां आदि प्रचलित हैं। वे सभी मानव मन की भीरूता को प्रदर्शित करती हैं। उनमें सत्यता की परख करने का प्रयास कभी नहीं किया गया। गांव की चौपाल पर अलाव के आस–पास बैठकर रोमांच हेतु सुनाये गये भूत–प्रेतों के किस्से अधिकान्शतया मनगढ़न्त ही होते हैं। यह सुनाने वाले की क्षमता व वाकपटुता पर निर्भर होता है कि वह उसमें सत्यता का पुट कितना दे सकता है।

मानव स्वभाव है कि जिसे देखा नहीं है, उस रहस्य–रोमान्च तथा परा–शक्तियों में उत्सुकता रखना। इसी कारण भूत–प्रेत का लोक–विश्वास जन–सामान्य में विकास–क्रम के साथ चला आ रहा है। संभवतः आने वाली शताब्दियों में भी वे इसी प्रकार प्रचलित रहेंगें। इसका दूसरा कारण अशिक्षा (शिक्षित भी) एवम् कथाओं को तार्किक कसौटी पर न कसना भी है। वैसे यदा–कदा भूत–प्रेत के लोक–विश्वास को समाप्त करने के उद्देश्य से अनेक कहानियां बनाई गईं जैसे– कपड़े की छाया को भूत समझना, वृक्षों से गुजरती हवा की सांय–सांय को भूतों की काल्पनिक आवाज समझना। खाली मकान, खण्डहर, पशु–पक्षियों या अराजक तत्वों के निवास–स्थान बन जाते हैं। उनको भूत–प्रेतों का निवास घोषित कर दिया जाना सामान्य बात है। किन्तु यह भ्रम नाशक कथायें सदियों पुराने लोक–विश्वास की मजबूत जड़ों को उखाड़ने में अक्षम रहीं। भूत–प्रेत का नाश केवल तन्त्र–मन्त्र से होता है, यह विश्वास सम्पूर्ण विश्व के ओझा और तांत्रिकों के व्यवसाय को आधार प्रदान करता है। इसे दूर करने के लिये शिक्षित समाज???? को आगे आना होगा लेकिन जागरुक लोग ही।

अन्धविश्वास से जुड़े हुए रीति रिवाज बान्दा और आसपास की स्त्रियों में गहरी जड़ जमाए हुए है। अन्धविश्वास की गहरी जड़े बनी हुई है, इसीलिए कोई कार्य करने से पहले शगुन और अपशगुन पर भयंकर रूप से विचार करते हैं। वह खाली घर देखना पसंद नहीं करते। अगर काणें व्यक्ति के दर्शन हो जाए तो समझते हैं कि अब शायद कोई कार्य न हो। अपने बच्चों के माथे के नीचे या कान के पीछे, आंख में से काजल निकाल कर लगाते हैं। बच्चों की कमर में काला धागा पहनाया जाता हैं। और ज्यादा अन्धविश्वास करने वाले मुल्ला मौलवियों से ताबीज भी ले आतें हैं। कोई भी बात हो जाए तो आज भी अखबारों में पढ़ने में आ जाता है कि झाड़ फूंक पर ज्यादा विश्वास है, बनिस्बत मेडिकल के। सड़क के चौराहों पर नींबू और मिर्च और अन्य चीजों का टोना टोटका भी कथित उच्च पदस्थ भी करते हैं। अगर किसी बच्चे को कुकर खांसी हो जाए तो माना जाता है कि दूध चावल खिलाकर और उसको मुंह से वापस निकाल कर काले कुत्ते को खिलाया जाय। जो छोटी या बड़ी देवी निकलती हैं जिसे चेचक या खसरा भी कहते हैं तो वह दबाना करके देवी धरने जाते हैं। देवी पर चढ़ाया हुआ तेल बच्चों को लगाते हैं। काले कुत्ते को गुलगुले खिलाते हैं। पीपल व बरगद के पेड़ के नीचे दिए जलाने जाते हैं। जब कुत्ते के रोने की आवाज सुनाई देती है तो वह यह नहीं देखे कि कुत्ते को क्या दुख है बल्कि यह लगता है कि अब विश्वास करने वाले पर दुखों का पहाड़ आने वाला है।

देवी देवताओं का सिर पर सवार होना एक आम बात है। अनेक औरतों को नवरात्रि के अवसर पर अथवा देवी उपासना के समय अथवा अन्य किसी कारण से देवी सर पर सवार हो जाती है/थी अथवा ब्रह्म देवता या ग्रामीण देवता दिमाग में समा जाते है/थे। इस अवसर पर वह स्त्री जिस पर देवी या देवता सवार होते है विशेष प्रकार की मुद्राएं बनाया करते है और उल्टा सीधा बोलते थे। ग्रामीण अंचल व शहरी अंचल के लोग प्रत्यक्ष की देवी से वरदान मांग करते है। नारियल एवम् बकरे की बलि चढ़ाने से देवी को उतारे जाने का प्रयत्न करते है। कुछ औरतों को भूत प्रेत भी आया करते है, जिनको शांत करने का कार्य तांत्रिक और पूजो किया करते है। यह पाखण्ड ग्रामीण और शहरों में बाबाओ के सम्मेलन में भी आज भी होते हैं। घर में एकाकी जीवन व्यतीत करने वाली कुलीन स्त्रियों के आज भी साधु संतों और बाबा लोगों के सम्मेलनों में दिखाई देती है। इसी तरह क्रिस्चियन की सभागारों में भी इस तरह के देवी देवता और भूत को आना दिखाते हैं इसमें मुस्लिम सबसे आगे हैं।

अरविन्द कुमार त्रिपाठी कृत पुरातन बान्दा, बुन्देलखण्ड का संक्षिप्त वर्णन

कृषि सम्बन्धी लोक–विश्वास

यह लोक–विश्वास कृषक समाज में अनुभवों के आधार पर ही व्याप्त है। कृषि–सम्बन्धी कहावतों में भी लोक–विश्वास की झलक प्राप्त होती है–

माई न परसै, भरे न पेट, मघा न बरसे, भरे न खेत।

अर्थात् जब तक माँ भोजन न परोसे तब तक सन्तान का पेट नही भरता है। उसी तरह किसान कितनी भी सिंचाई करे किन्तु उत्तम फसल तो तभी होगी जब मघा नक्षत्र में वर्षा से खेत भर जाय।

इसी प्रकार

जौ कउं बरसैं हाथी, गैऊं लग है छाती।
स्वाति गेहूँ आर्द्रा धान, न ब्यापँ कीरा और घाम

अर्थात् हस्ति (हाथी) नक्षत्र में वर्षा होने से गेहूँ की पैदावार अच्छी होती है। स्वाति नक्षत्र में गेहूँ व आर्द्रा नक्षत्र में धान बोये तो कभी फसल कीड़े या धूप से नष्ट नहीं होगी। इसका आन्तरिक भाव यही है कि समय से बुआई होने पर उचित मौसम का भरपूर लाभ फसल को मिलता है।

कि काछी जाति के लोग अच्छी सब्जी उत्पन्न हो, इसके लिये मंगल और गुरूवार को होम–धूप करते हैं, ऐसा लोक–विश्वास है। अन्तर्भाव यही है कि सब्जी की खेती में सप्ताह में दो बार धुंआ करने से वातावरण के कीटाणु नष्ट हो जाते हैं। जिससे सब्जियों को उनसे हानि नहीं होती।

यह लोक विश्वास भी है कि जब तक बौनी/बुआई पूरी न हो किसान बाल नही बनवाते अर्थात् बुआई के मध्य में किसी भी अन्य कार्य में समय व्यर्थ न करें, इसी उद्देश्य का संकल्प है– बाल न बनवाना।

घर–परिवार के लोक–विश्वास

परिवार में कन्यादान पुण्य है, पुत्री के घर भोजन न करना, उसके चरण स्पर्श करना जैसे लोक–विश्वास हैं। बुन्देलखण्ड क्षेत्र में कन्या को देवी–स्वरूप माना जाता है, इस कारण आदर–भाव से चरण स्पर्श करते हैं; एक भाव यह है कि, दान देने के बाद वस्तु पर हमारा अधिकार नहीं रहता। यह सोच ही कन्यादान के ही बाद पुत्री को पराया धन मानने में सहायक है।

दक्षिण दिशा से सम्बन्धित अनेक लोक–विश्वास हैं जैसे– दक्षिण की ओर पैर करके नही सोना, दक्षिण मुखी निवास स्थल अशुभ है। वैज्ञानिक दृष्टि से पृथ्वी के चुम्बकीय ध्रुव उत्तर–दक्षिण हैं, उस दिशा में सोने से हमारे तंत्रिका–तन्त्र, रक्त–संचार एवम् शारीरिक स्वास्थ्य पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। इसी प्रकार दक्षिण मुखी निवास में पूर्व से निकलने वाले सूर्य व उसके पश्चिम में अस्त होने की दशा में प्राकृतिक प्रकाश का अभाव होगा। विज्ञान बताता है कि सूर्य का प्रकाश अनेक बीमारियों के कीटाणुओं का नाश करता है धूप सेवन से हमें विटामिन डी प्राप्त होता है। यह समस्त सुविधायें दक्षिण मुखी निवास में असम्भव होंगी।

रात्रि में झाडू लगाने व कूड़ा फेंकने से लक्ष्मी की हानि होती है, ऐसा लोक–विश्वास है। संभवतः रात्रि में छोटी महत्वपूर्ण वस्तु कूड़े के साथ न चली जाये, इसी आशय का भाव निहित है। प्रातः काल घर की सफाई लक्ष्मी का आगमन मानी जाती है। प्रात–काल उठना स्वास्थ्य के लिये तथा नियमित दिनचर्या के लिये आवश्यक है।

घरों में जल भरा कलश, दही भरा बर्तन इत्यादि देखना शुभ मानते हैं। यह पूर्णता के प्रतीक हैं। बछड़े को दूध पिलाती गाय दिखना शुभ माना जाता है। यह संतृप्ति व मातृत्व भाव का संचार करती है। मनो भावों को बल प्रदान करने वाले लोक–विश्वासों की सार्थकता मानव जीवन के लिये आवश्यक है।

उत्तम स्वास्थ्य के लिये व्रत–उपवास रखना और केवल फल और दूध का सेवन करना पौष्टिक तत्वों से शरीर में ऊर्जा संचार का द्योतक है। घरों में पानी भरने में ताँबें के पात्र का उपयोग करना होना, नीम की पत्तियां चबाने से ज्वर न होना जैसे स्वास्थ्य भावना से युक्त लोक–विश्वास भी है। इनका वैज्ञानिक व चिकित्सीय गुण सर्व विदित है।

नीतिपरक लोक–विश्वास

नीतियाँ सम्पूर्ण जीवन के कार्यों को प्रभावित करती है। वास्तव में नीति परक लोक–विश्वास मनुष्य के मानवीय युणों को परिमार्जित कर लोक कल्याण के कार्यों में लगाने हेतु, प्रेरित करते हैं।

"पराधीन को कोई सुख नही होता" / पराधीन सपनेहु सुख नाही, यह स्वतन्त्रता सन्घर्ष हेतु प्रेरित करता है। दूसरे के दुःख में स्वयं दुःखी होकर दुःख की सीमा को समझा जा सकता है, दूसरे की आशा न करे बल्कि स्वयं उद्यम करें। जो करेगा वो पायेगा। कर्म करने वाले को ईश्वर या भाग्य भी साथ देता है। वृद्धों और सज्जनों का आशीर्वाद सेवा करके प्राप्त करें, अवश्य फलीभूत होगा।

दुर्जन पुत्र से योग्य पुत्री भली है। यह समस्त लोक–विश्वास लोक–नीतियों के आधार है, इनका पालन करने से मनुष्य का नैतिक विकास सम्भव है जो मानवता की सेवा हेतु अत्यन्त आवश्यक है। यह समस्त भाव समाज में बड़ों का आदर, छोटो को स्नेह देने तथा सदाचार करने की प्रेरणा देते हैं।

ज्योतिष सम्बन्धी लोक–विश्वास

ग्रहों के प्रकोप से हानि होती है, ग्रह दशा अनुकूल होने पर सुख तथा प्रतिकूल होने पर दुःख प्राप्त होता है। वर्तमान, समय में ग्रह–नक्षत्रों के प्रति वैज्ञानिक विचारधारायें उत्पन्न हुईं हैं जो शरीर में उपस्थित तत्वों पर ग्रहों के गुणों के प्रभाव को स्वीकार करती हैं।

शक्ति स्वरूपा माँ दुर्गा की उपासना के नौ दिन प्रत्येक कार्य हेतु शुभ माने जाते हैं संभवतः माता का आश्रय हमें आत्म बल प्रदान करता है। एक पक्ष में दो ग्रहण अशुभ है इस लोक–विश्वास में संभवतः प्राकृतिक असंतुलन का भाव निहित है।

लोक–विश्वास समाज के लोक–जीवन के अभिन्न अंग है। जाने–अनजाने सभी निर्वाह करते हैं। मन में यह भाव रहता है, कि कहीं न मानने से अशुभ न हो जाये। क्योकि मनुष्य सदैव अपना भला चाहता है। इस कारण लोक–विश्वास मानना उसकी विवशता भी है। द्विविधा की स्थिति में तथा कभी–कभी परम्पराओं और रीति–रिवाजों के दबाव में भी मानव विश्वास करता रहता है।

हमें यह स्वीकार करना ही होगा कि लोक–विश्वास समाज का मन है। उन्हें जानकर हम जन की आत्मा और भावनाओं को सरलता से समझ सकते हैं। बुन्देली लोक–सन्स्कृति का आधार लोक–विश्वास ही है। इन्ही के माध्यम से हम लोक–सन्स्कृति व सभ्यता का विवेचन कर सकते हैं।

<u>लोक–रीतिरिवाज</u> <u>विवाह अध्याय में देखें</u>

लोक विश्वास की जड़ें, जब समाज में स्थायीत्व प्राप्त कर लेती हैं, तब वे लोक–मान्यताओं में परिवर्तित हो जाती हैं। रीति–रिवाज, लोक मान्यताओं पर ही आधारित होते हैं हमारे । यह समाज की सन्स्कृति व सभ्यता के साकार रूप होते है। इसी प्रकार बुन्देली लोक जीवन में रीति–रिवाज और मान्यताओं की अपनी अलग सुगन्ध है। मनुष्य जीवन में होने वाले सोलह संस्कारों में यह सम्बद्ध रहती है। शास्त्रों में वर्णित सोलह संस्कार बुन्देली लोक–जीवन में भी मनाये जाते है, किन्तु उनका मनाने का तरीका अलग अलग है। अनेक निषेध भी है। 16 संस्कार इस प्रकार है।

1) गर्भाधान संस्कार	2) पुंसवन संस्कार	3) सीमन्तोन्न्यन संस्कार
4) जातकर्म संस्कार	5) नामकरण संस्कार	8) निष्क्रमण संस्कार
7) अन्नप्राशन संस्कार	8) चूड़ाकर्म संस्कार	9) वेदारंभ संस्कार
10) उपनयन संस्कार	11) कर्ण्वेधन संस्कार	12) समापवर्तन संस्कार
13) विवाह संस्कार	14) वानप्रस्थ संस्कार	15) सन्यास संस्कार
16) अन्त्येष्टि संस्कार		

अरविन्द कुमार त्रिपाठी कृत पुरातन बान्दा, बुन्देलखण्ड का संक्षिप्त वर्णन

सन्दर्भ सौजन्य साभार

2015ण273688बुन्देलखण्ड की चित्रकला 1से 197 चंहम21 वदूंतके

विनीता ग्रन्थ

लोक विश्वास, लोकाचार व कुरितियां Folk Faith, Ethos & Bad Customs